रस शब्द की व्याख्या करते हुए उसके स्वरूप का स...

साहित्य में रसवादी आचार्य रस को काव्य की आत्मा मानते हैं – 'वाक्यं रसात्मकं काव्यम्' अर्थात् रसात्मक ~~काव्य~~ ही वाक्य ही काव्य है। 'रसो वै सः' इस वैदिक श्रुति के आधार पर रस को आनन्दस्वरूप ब्रह्म ही माना गया है तथा इस श्रुति वाक्य द्वारा भारतीय मनीषियों ने जीवन के परम उद्देश्य के रूप में अलौकिकानन्द स्वरूप तत्व का विवेचन किया है। रस की महत्ता के विवेचन से पूर्व इसकी आवश्यकता पर दो शब्द कह देना अनुपयुक्त न होगा – जीवन की गति यह स्पष्ट कर देती है कि रस जीवन का सार है, और समस्त मानव-मात्र का जीवन रस के लिए है। जितने भी क्रिया-कलाप हैं, उनकी प्रेरणा और लक्ष्य, उनका उदय, अस्त रस में ही है। साथ ही, साधनावस्था भी 'रस' की अवस्था है; इसमें संदेह नहीं, यदि हम उसको इस रूप में परिणति कर सकें। यह निर्विवाद सत्य है कि रस जीवन के लिए आवश्यक तत्व है, इसी को प्रसाद जी ने अपने इन शब्दों से व्यक्त किया है –

"काम मंगल से मण्डित श्रेय,
सर्ग इच्छा का है परिणाम।"

दूसरे अर्थ में लोक में प्रचलित खाद्य पदार्थों में लवण तिक्त, मधुर, कषायादि षड्रस तथा सांगीतिक रस, आयुर्वेदीय रस अथवा यत्र-तत्र-अन्यत्र प्राप्त होने वाले रस, जीवन के लिए आवश्यक तत्व हैं। संभवतः भरतमुनि ने रस शब्द की व्यापकता एवं महत्ता का अनुभव करके ही इस कारिका का निर्माण किया होगा –

"नहि... रसादृते कश्चिदपि अर्थः प्रवर्तते।"

~~'रस' शब्द के अनेक प्रकार हैं – सार – आसव, धातु – भस्म, हर्ष – आनन्द। इस शब्द के मुख्य अर्थ हैं –~~
~~(i) पदार्थ – रस – [illegible] – [illegible], [illegible] [illegible] [illegible]।~~
~~(ii) आयुर्वेदीय रस –~~
~~(iii) कामशास्त्र में~~

जीवन के सही और व्यवस्थित निर्माण के लिए 'रस' आवश्यक है। रस के बिना जीवन की कल्पना ही नहीं की जा सकती चाहे वह आध्यात्मिक जगत हो अथवा लौकिक जगत। जीवन की गति भी रस के कारण ही है। जिस प्रकार नाना पदार्थों से तैयार किये हुए व्यंजन से रस की प्राप्ति होती है, उसी प्रकार अनेक प्रकार के भावों से रस की निष्पत्ति होती है। जिस प्रकार अनेक प्रकार से युक्त अन्न का योग

Scanned with CamScanner

करते हुए स्वस्थ पुरुष आनन्द की प्राप्ति करते हैं, उसी प्रकार विभाव ~~अनेक प्रकार के भावों से रस की निष्पत्ति होती है~~। अनुभाव और संचारी भावों का आस्वादन करते हुए सहृदयजन रस का आनंद लेते हैं। प्रथम आस्वाद की प्रक्रिया स्थूल है और दूसरे की सूक्ष्म।

'रस' शब्द 'रस' धातु और 'अ' (अच् अथवा घञ्) प्रत्यय से निष्पन्न हुआ है। अतएव 'रस' शब्द की व्याख्या इस प्रकार की जा सकती है - 'विभावानुभावव्यभिचारिसंयोगाद्रसनिष्पत्तिः' और यह रस की निष्पत्ति नाना भावों के उपागम से होती है - "नानाभावोपगमाद्रसनिष्पत्तिः। नानाभावोपहिता अपि स्थायिनो भावा रसत्वमाप्नुवन्ति।"[2]

आचार्य विश्वनाथ ने साहित्य दर्पण में रस के स्वरूप को व्यक्त करते हुए लिखा है कि सत्वोद्रेक रस का हेतु है। यही नहीं, वह तो अखण्ड, स्वप्रकाशानन्द, चिन्मय, वेद्यान्तर ~~स्पर्श~~ स्पर्शशून्य, ब्रह्मास्वाद सहोदर और लोकोत्तर चमत्कार से युक्त ~~है~~ होता है -

"सत्वोद्रेकादखण्डस्वप्रकाशानन्द-चिन्मयः।
वेद्यान्तरस्पर्शशून्यो ब्रह्मास्वादसहोदरः।
लोकोत्तर-चमत्कारप्राणः कैश्चित्प्रमातृभिः।
स्वाकारवदभिन्नत्वेनायमास्वाद्यते रसः॥"
(साहित्यदर्पण 3।2-3)

आचार्य विश्वनाथ का आशय यह है कि रस का आस्वादन होता है अतः वह रस है अर्थात् रस आस्वाद रूप है - "रस्यते आस्वाद्यते इति रसः" और इस रस के आस्वाद कर्ता सहृदय ही होते हैं। इसी भाव को काव्यप्रकाश मम्मट ने इस कारिका द्वारा व्यक्त किया है -

सवासनानां सभ्यानां रसस्यास्वदनं भवेत्।
निर्वासनास्तु रंगान्तः काष्ठकुड्याश्मसन्निभ॥

उनका आशय यह है कि रस का आस्वादन सहृदय को ही संभव है। उनका 'सवासनां सभ्यानां' कथन सहृदय हृदय का ही बोधक है। रस सहृदय ~~संवेद्य~~ संवेद्य है। रस की निष्पत्ति सत्वगुण की अधिकता से होती है तथा रस का आस्वाद सदा ही अनिवार्यतः आनन्दमय ही होता है और यह आनंद अखण्ड, चिन्मय तथा वेद्यान्तर